आदिवासी कहानी में विविध संदर्भ

प्रा.डॉ. दिलीप कोंडीबा कसबे
हिंदी विभाग, विज्ञान महाविद्यालय, सांगोला.

प्रस्तावना : -

वैसे देखे तो बीसवी सदी के प्रारंभिक वर्षों में जन्म लेनेवाली कहानी अनेक उथल पुथलों और परिवर्तनों के दौर से गुजरी है | हिंदी में 'समकालीन' शब्द अंग्रेजी भाषा के 'कंटेंपरेनियस' अथवा 'कंटेंपरेनिटी' शब्दों के रुप में मना जाता है, जिसका अर्थ है - 'एक ही समय में समान काल में घटने वाला'

भारतीय संविधान में अधिसूचित जाति परिगणना में कुछ जातियों को जो आदिम अवस्था में जीवित है | पाश्चात्य देशों में इन्हें 'जीप्सीश कहा जाता है, वहीं विकसनशील देशों में इन्हें 'जनजाति', आदिवासी', ' बनवासी', 'गिरीजन', 'वन्यजन' आदि कइ्र नामों से पुकारा जाता रहा है | वास्तवतः भारत वर्ष में निवास करनेवाली संपूर्ण आदिम जातियाँ ही यहाँ की मूल निवासी है | जैसे - "पहाडियों, जंगलों, द्वीपों में रहनेवाले ये आदिवासी देश के छब्बीस राज्यों और संघीय भू-भाग में फैले हुए है | ----- सन १९६० में बडी मुस्किल से अपेक्षाकृत एकांत में रहनेवाले आमतौर पर पिछडे विशिष्ट संस्कृतिवाले लोंगो के रुप में इन्हें परिभाषित किया गया |"[१] यहाँ यह सर्वज्ञात है कि आदिवासीयों का मुख्य निवास वनों में था और तेंदूपत्ता, कंदमूल, लकडी, घास, जडी-बूटी, गोंद, कत्था, औषधि, शहद आदि बेचकर आजीविका चलाते थे इसमें कोई गैर नहीं है |

- **आदिवासी साहित्य संदर्भ -**

जीस सृजेता ने आदिवासियों को नजदीकी से देखा होगा, बार-बार संवाद किया होगा, उनके रहन- सहन, खान-पान, अस्त्र-शस्त्र तथा मजदूरी करनेवाले मजदूर आदि की स्थितियों को जिन्होंने देखा, समझा, भोगा, अनुभूति की, वही आदिवासियों के बारे में वास्तव और समर्थनीय साहित्य लिख सकता है | जैसे रमणिका गुप्ताने कहा कि - "आदिवासी साहित्य इस भूमि से प्रसूत आदिम वेदना तथा अनुभव का शब्दरुप है |"[२] और रामचंद्र मुरमू का भी मानना है कि - "साहित्य द्वारा ही हम संस्कृति और रीति-रिवाज को नया रुप दे सकते है |"[३]

- **आदिवासी कहानी -**

उत्तर आधुनिक युग में हिंदी कहानी आदिवासी जीवन का साक्षात्कार कराती है | संक्षिप्त कहे तो आधुनिक कुछ कहानिकारों ने आदिवासी जीवन, अलगाव में बनते-बिघडते व्यवहारों, जमीनी बेदखली, राजनीतिक, कपट, छलावा, विस्थापन आदि को लेकर विभिन्न समस्याओं, मजदूरों की विवशता, अनपढ लोगों को ठगी, औरतों के साथ खिलवाड, अन्याय-अत्याचार, बलात्कार, गरीबी, उनकी जिंदगी के साथ खिलवाड आदि कुछ कुव्यवस्थाओं का दर्शन इन कहानियों में किया है | साथ ही मंत्रियों, सरकारी कर्मचारियों, नेताओ, उदयोगपतियों, साहूकारों, दलालों आर्थिक साम्राज्यवादियों द्वारा आदिवासी विकास के नाम पर होनेवाला विभिन्न भ्रष्टाचार आदि का ऊहापोह करने का प्रयास किया है | संक्षिप्त में आदिवासी जीवन की सृजेता में शोषण, उत्पीडन, बलात्कार, नक्सलवाद, मावोवाद, पलायन, विस्थापन, भ्रष्टाचार और नैतिक अधःपतन (गिरावट) आदि का विभिन्न चित्रण करना आदिवासी, गैर आदिवासी लेखकोंने शुरु किया है, इसलिए उनका भविष्य उज्वलता की ओर अग्रसर है |

१) आदिवासी कहानी में सामाजिक संदर्भ -

वास्तवतः भारतीय समाज व्यवस्था में आदिदेव और प्रकृति पूजक आदिम समाज है | आज भारतीय संविधान में 'अनुसूचित जनजाति' वर्ग की वेदना, पीडा, कुंठा, संवेदनाओं को 'सामाजिक व्यवस्था में परिवर्तन' करना उद्देश्य रहा है | वैसे सोचे तो आदिवासी समुदाय की तथाकथित उच्च समाज व्यवस्था ने अर्थात - ब्राम्हण, उद्योगपति, पूँजीपति, नौकरशाह, व्यापारी वर्ग, साहूकार आदियों ने प्रताडना की है,

कर रहे का चित्रण साहित्यकार कर रहे है | वैसे सोचे तो आदिवासी प्रकृति के पुजारी माने जाते है | इसलिए अपरिग्रह, अस्थेय, अहिंसा जैसे सिद्धांतों की स्वभावत: अनुपालना करनेवाला आदिवासी स्वाभिमानी, निडर, संघर्षशील, समत्वभाव युक्त, सहयोगी और संघठीत रहनेवाला ठहरा है | संक्षिप्त में आज भी अधिकतर आदिवासी जंगलों, पहाडों, नदी, किनारों जैसे दुर्गम क्षेत्रों में निवास करते है | उनकी अपनी सभ्यता, संस्कृति की दृष्टि विशिष्ट है | उनकी आजिविका के साधन, उनकी निर्भरता आज भी प्रकृति प्रदत्त संसाधनों पर अधिक आधारित है | किंतु आज भी भारतीय अर्थव्यवस्था, वैश्विकरण, बाजारीकरण ने उसकी जीवनशैली, संस्कृति भाषा आदि को जैसे समूल नष्ट करने की ही ठान ली है | यहाँ आदिवासी लेखकों ने बराबर ही आदिवासियों की समस्याओं जैसे - कुपोषण, शराब, नशा, स्वास्थ, अशिक्षा, गरीबी, उत्पीडन, विस्थापन, पलायन आदि को साहित्य में चितारा है | जैसे- विनोद कुमार ने महुए की शराब (हंडिया) की समस्या को कथित किया है कि "शराब उनके सामाजिक रीति-रिवाज का अभिन्न अंग है, लेकिन शराब के रुप में वे हंडिया पीते है जो पानी - भात का थोडा ही विकृत रुप है | हंडिया वे अपने मृत पूर्वजों को भी चढाते है ------ पूजा के विशेष अवसरों पर देवताओं को भी चढाया जाता है |"[४] इससे स्पष्ट है, सेठ-साहूकारों, महाजनों, दिकुओं ने आदिवासियों को हंडिया व महुओं की शराब पिला-पिलाकर उनका शोषण किया, जमिन हडपी, मुनाफा कमाया, दुर्दशा की इस जैसी समस्याओं पर लेखकों ने प्रकाश डाला है |

सामाजिक संदर्भों की आदिवासियों के जीवन शैलियों पर कहानी लिखनेवाले कुछ लेखक है - भारत दोसी ने 'वही चप्पले' में शराबी और गरीब आदिवासी की उपेक्षा, एस. इलियास ने 'सूर्यास्त' शराब से बरबाद परिवार का जीवन, यशोदा टुडू ने 'रावणी माई' में दलित - आदिवासियों का सामाजिक जीवन का खोखला, फादर पीटर पॉल ने 'राजकुमारों के देश में ' गाँव की तिकडमी चौकडी- मुखिया, ठेकेदार, सरपंच, पुलिस के नंगे पन को तो रामधन लाल मीणा ने 'अप्रत्याशित' कहानी में खोखली न्यायिक प्रणाली पर शब्द प्रहार कर झूठी न्याय व्यवस्था का मुखौटा फाड डाला है | इस प्रकार परिवार, समाज, व्यक्ति स्वातंत्र्य, स्त्री स्वच्छंदता एवं पराधिनता, शहरी तथा ग्रामीण जीवन, वर्गगत- उच्च, मध्य, निम्नवर्गीय आदिवासी जीवन शिक्षित,आत्मनिर्भर, चेतनायुक्त होने लगा है | किंतु आदिवासी जीवन का संघर्ष और विडंबनाओं का अंत तो नही हो सका यही सच है |

२) आदिवासी कहानी में सांस्कृतिक संदर्भ -

भारतीय सामाजिक, सांस्कृतिक, जातीय व्यवस्था वर्ण व्यवस्था में फँसी हुई है | उसे पहचानना, उसे बचाए रखना, उसका संरक्षण-संवर्धन करना मानवीय समुदाय की शायद नीयति रही है | प्राचीन भारतीय समाज संदर्भ की वर्णभेद व्यवस्था ऋग्वेद में दसवे मंडल के पुरुष सूक्त और बाद में मनुस्मृति ने किया गया है | यह सामाजिक भेदों का, शोषण का बडा अस्त्र-शस्त्र लगता है | इसका फायदा ब्राम्हण और सामंतोने उठाया और उनके शिकार दलित, स्त्री वर्ग, आदिवासी हुए | इसकी शिकायत मध्यकालीन संतों ने पहली बार की | तत्पश्चात उन्नीसवीं शताब्दी के समाज सुधार आंदोलन ने सामाजिक, सांस्कृतिक, धार्मिक बुराईयों से मुक्ति का बिगुल बजाया | यह आंदोलन शोषित और उत्पीडित जातियों द्वारा किया गया संघर्ष था | भारत में सामाजिक, सांस्कृतिक व्यवस्था को सबसे अधिक खतरा ब्राम्हण वाद से रहा माना है | इससे संघर्ष करते हुए स्वामी विवेकानंद और दयानंद ने हिंदु-धर्म और संस्कृति की नयी व्याख्या प्रस्तुत की | जिसमें अल्पसंख्यांक ब्राम्हणों ने असंख्य दलित आदिवासियों को गुलाम बनाकर रखने का आरोप किया है | उनका रामा स्वामी पेरियार ने कडा विरोध करते हुए कहा है कि - | "हमारी संस्कृति द्रविड संस्कृति हे |"[५] यहाँ स्पष्ट है कि भारतीय संस्कृति विभेदपूर्ण है, यहाँ समझदारी और समन्वय की आवश्यकता है | डॉ. बाबासाहब आंबेडकरने भी अछूत 'कौन है ? ' जैसे प्रश्न उठाये थे | उन्नीसवी शती के अंत में आदिवासी समाज और संस्कृति को पहचान दिलाने बिरसा मुंडा भी आगे आये, क्योंकि उन्होंने ब्राम्हणवाद, सामंतशाही को समानता के विरोधी मानकर आदिवासी संस्कृति विकृत करने का आक्षेप किया | संक्षिप्त में बरसा मुंडा आदियों ने आदिवासी संस्कृति सामुदायिक भावना की पोषक, समानता की पैरोकार, जनतंत्र के समर्थक समुदाय की संस्कृति बताया है | किंतु आज आदिवासियों का 'संस्कृतिकरण' होने लगने के कारण आदिवासी की संस्कृति विकृत होने लगी है | स्पष्टत: कहे तो आदिवासियों को एक ओर मुख्य प्रवाह में लाने का प्रयास चल रहा है तो दूसरी ओर आदिवासी संस्कृति, लोक-कलाओं, लोक नृत्यों, वेशभूषा आदि का व्यापारीकरण भी हो रहा है, ऐसा लगता है |

संक्षिप्त में कहना है तो आज आवश्यकता है आदिवासियों के विस्थापन, पलायन को रोकने की, उसके अस्तित्व को बचाए रखने की, उसके जंगल, जमीन, जल, घर, रोजगार के संरक्षण की, उन्हें शिक्षित करने की, अर्थात आदिवासियों को मूलभूत सुविधाएँ प्रदान करने की |

३) आदिवासी कहानी में धार्मिक संदर्भ -

धर्म व्यक्ति की आस्था है | निर्वाह पालन का सूत्र है | धर्म मानवीय समाज के कल्याण का मार्ग माना जाता है | आदर्श हिंदी शब्दकोश के अनुसार धर्म का अर्थ है - "सत्कर्म, पुण्य, सदाचार, विशिष्ट व्यापार, प्रकृति, नियम, नित्य आदि |"[६] अर्थात भारतीय समाज और संस्कृति में धर्म को लेकर विभिन्न धारणाएँ, सिधांत, मिथक है | धर्म में सामाजिक, सांस्कृतिक, सांप्रदायिक, आर्थिक, ऐतिहासिक और राजनेतिक संघर्ष भी होते है | जो धर्म पर संबंधित मठाधिशों, धर्माधिकारियों, संगठनों या संस्थाओं का पूरा अधिकार समझा जाता है, कदाचित यही धार्मिक संस्थाएँ आदिवासी समाज जीवन में विभिन्न बाधाएँ, समस्याएँ पैदा कर रही है | और बिल्कुल आदिवासी लेखकों ने कहानियों में धार्मिक परिवेश, विश्वास, प्रथाएँ, अंधविश्वास, धार्मिक अलगाववाद एवं धार्मिक सांप्रदायिकता की वास्तवता को इसमें चित्रित करने का प्रयास किया गया है | धर्म को आधार बनाकर अत्याचार अर्थात अमानुषिक छल- कपट और अपमानित कर गुलाम बनाने का कार्य सदैव किया जाता रहा है |

आधुनिक जीवनशैली में आदिवासियों की विभिन्न उपजातियों जैसे मुंडारी, संस्थाल, खडिया, बिरहोट, भील, मीणा, गरासिया, काथोडी सहरिया समाज आदि भिन्न-भिन्न प्रथाएँ अपना निर्वाहन करते है | किंतु उसपर हिंदु धर्म का प्रभाव अवश्य पडा हुआ दिखता है | संक्षिप्त में आदिवासी धार्मिक व्यवस्था में इष्टदेव का सर्वाधिक महत्व है | पूर्वज जहाँ कुलदेव होते है वहाँ इस्टदेव अलग होते है, जिनसे गाँववाले पूछताछ के लिए आते है | जैसे राजस्थान की गरासिया आदिवासी जाति में धार्मिक आस्था, परंपरा, अंधविश्वास के कारण देवी-देवताओं को मनाना, भजन करना, पूजा करना तथा स्तुती आदि विशेष का उल्लेख है, जैसे - "गरासिए लोग बडे धर्मजीवी तथा देवी-देवताओं में पूर्ण आस्था लिए होता है ------ इसिलिए अव्वल तो कोई ऐसा काम करेंगे नही जिससे देवता नाराज न हो |"[७] डॉ. सुनीता कुमारी गुप्ता की कहानी हाय रे बेटी भी इसी का योग्य प्रमाण है | धर्म के संदर्भ में डॉ. काणे का कहना है - "धर्म जीवन का मूल आधार है इसी से मानव को प्रकाश और प्रेरणा मिलती है |"[८] इससे स्पष्ट होता है, सभी जीवों के प्रति मन में दया भाव, स्नेह भाव करना ही मनुष्य का प्रमुख धर्म है | किंतु कुछ लोग धार्मिक उन्माद मचाने लगे है - "उन्हे बुरी खबर मिली है कि अलग राज्य की माँग करनेवाले उग्रवादी लोगों ने गाँव को जला देने की धमकी दी है | आशंकित गाव वाले तीर भाले, दारु-बंदूक आदि लेकर उग्रवादियों के इंतजार में है |" यहाँ स्पष्ट कहें तो आज धार्मिक उन्माद के कारण भिन्न-भिन्न कुप्रवृत्तियों के दलाल, अलगाववादी संगठन, देशी- विदेशी शक्तियाँ असामाजिक, असमानता का संघर्ष तीव्रतम कर रहें है | वस्तुत: आदिवासी कहानियाँ धार्मिक विच्छेद, धर्मगत अलगाव के मूल कारणों की पोल खोल करने का प्रयास कर आदिवासियों के जीवन शैली को मूर्त स्वरुप दे रहे है | |

४) आदिवासी कहानी में राजनीतिक संदर्भ -

समकालीन हिंदी कहानी में राजनीतिक संदर्भों के विभिन्नता का होना स्वाभाविक है | नई सदी के विश्ववादी राजनैतिक तथा आर्थिक बदलाव के फल स्वरुप कहानी की 'थीम' में दलित, स्त्री, आदिवासी या पिछडे वर्ग को प्रतिनिधित्व प्राप्त करने की प्रवृत्ति रही है | यह परिवर्तन का सूचक मना जाता है | स्पष्ट है, ये संदर्भ आदिवासियों के सामाजिक, सांस्कृतिक, आर्थिक जीवन को आधार बनाकर लिखी गई कहानियाँ है | ये राजनैतिक व्यवस्था के संदर्भ का प्रत्यक्ष रुप दृष्टव्य है | आज उसके जंजाल में उलझा आदिवासी बेबस है, आर्थिक, सामाजिक, शैक्षिक विकास के लिए तरस रहा है | उनकी आर्थिक एवं राजनैतिक स्थिति में गिरावट आयी है | संक्षेप में वस्तुत: उनके साथ राजनीति ही हो रही है | इस संदर्भों में 'राजनीति' से आशय कुनीति, कुचाल, छलावा, धोका या छदम ही रह गया है | जैसे कभी सवर्ण नेताओं, सरकारी अधिकारियों या कभी धर्म के ठेकेदारों, महाजनों, सूदखोरों, सेठ- साहूकारों द्वारा जातीय राजनी ति कर दी | जैसे 'युध्दरत आम आदमीश के संपादकीय में रमणिका गुप्ताने लिखा है - "गाँव में एक तरफ इजारेदार, मुनाफाखोर, साहूकार, सामाजिक और राजनीतिक दलालों की भरमार है, जो उसे फुसलाकर लूटने को तैयार रहते है, लालच देते है |" दूसरी तरु हथियारों से लैस एक जमात उन्हें रास्ता दिखाती है - "तुम खुद ही लडो अपनी लढाई लेकिन शान से मरो मार कर मरो |"[९] इससे स्पष्ट है, राजनेता , प्रशासन तंत्र, राजनीतिक दल आदिवासी की रक्षा करतो तो आज नक्सल वाद क्यों बढता ? स्पष्ट है, यहाँ अर्थसत्तावादियों, भूमाफियों, उद्योगपतियों, ठेकेदारों, राजनेताओं के द्वारा कूटनीति का षड्यंत्र चल रहा है, जो थमना चाहिए |

पी.ए. संगमा, दिलीप भूरिया, किरोडी लाल मीणा, शिबू सोरेन, बाबूलाल मरांडी, अर्जून मुंडा आदि आदिवासी नेता उसकी राष्ट्रीय पहचान होते ही उसकी जडे कमजोर करने की साजिस रची जाती है | वे कमजोर होते है | जवाहरसिंह मार्को ने अपनी 'परिचर्चा छह' में बताया है -"आज तक आदिवासियों को सभी राजनीतिक पार्टियाँ सिर्फ वोट बँक के रुप में इस्तेमाल करती आयी है | संविधान में आदिवासी क्षेत्रों के लिए जो प्रावधान किए गए है उसे पूरी तरह से लागू किया गया होता तो आज तस्वीर कुछ और ही होती |"[१०] तत्वत: यहाँ आज अनेक राजनीतिक पार्टियाँ जिस तरह से क्षेत्र में आदिवासियों को नकार रही है इसके पीछे बहुत बडी साजिश लगती है | क्योंकि उनकी अनमेलता, अज्ञान, उनकी कमजोरी लगती है | अर्थात आदिवासियों को अपने ऊपर होनेवाले दूर्व्यवहारों, छल-कपट से मुक्ति पाने के लिए अपने आप में सक्षम होना होगा, अपने वोट का मूल्य राजनेताओं को समझना होगा, ऐसा लगता है |

५) आदिवासी कहानी में आर्थिक संदर्भ -

मानवीय समाज की आधारशीला समुदाय, संगठन और अजीविका का के संसाधनों पर निर्भर है | अर्थ प्रणाली समाज का प्राण है | जैसे व्यापार, उत्पादक, मजदूर, कृषक, प्रकृत्ति पर निर्भर समाज, कामगार आदि इसमें समाविष्ट है | भारतीय गाँवो में सर्वहारा वर्ग किसान, मजदूर, आदिवासी, दलित बहुसंख्य रुप में निवास करते है | आदिवासियों को कसबों, नगरों से दूर, जंगल, पहाडों आदि में बसने पर मजबूर किया जिससे उनकी अर्थव्यवस्था डगमगाने लगी | वास्तव रुप में आदिवासी कहानियों में फादर पीटर पॉल इक्का की 'राजकुमारों के देश में ' कहानी "ग्रामीण अर्थव्यवस्था का पर्दाफाश करती नजर आती है |"११ अनिल कुमार ने 'कष्ट क वृत्तांत' में महाजनों द्वारा आदिवासियों को किस प्रकार तंग किया जाता है, उधार वसूल के तरीके कहे है, "जैसे गोकुल महाजन ने कहा है कि आपको बता दूँ कि दुकान का ६९ रुपये उधार लौटाना है |"१२ तो सं. रमणिका गुप्ता ने ' सूर्यास्त' और 'आँधी' कहानी के दादा की विडंबना चितेरी है |

आज के युग में आदिवासियों पर आए अस्तित्व (आर्थिक आदि) संकट के मूल कारण क्या होंगे ? उसके उपाय क्या हो सकते है ? के संदर्भ में सुरेंद्र नायक ने बताया है - |"आज सारी दुनिया में पूँजीवाद और भौतिक वाद का वर्चस्व है | हर व्यक्ति अकूतधन, पद, प्रतिष्ठा पेसा कमाकर अकेला सुपरमॅन बनना चाहता है | उसे न देश की परवाह है, न समाज की, न- जाति की, न उपजाति की, न रिश्तेदार की, न

परिवार की | वह अकेले सुख भोगना चाहता है |"**१३** वास्तव कहना है तो आज विभिन्न क्षेत्रों के आदिवासियों की आर्थिक स्थिति दिन-ब-दिन बिगडती जा रही है | क्योंकि बढती बेरोजगारी, कुपोषण, भुखमरी, स्वास्थ, शराबखोरी जैसी दुर्भाग्यपूर्ण आर्थिक समस्याएँ, शिवाय विकास के वर्तमान मॉडल के कारण राष्ट्रीय आय तथा आर्थिक शक्ति पूंजिपति, राजनेता, जातिय वादी, चापलूषीवाले, कूटनीतिवाले, शोषक, स्वार्थियों के हाथों में केंद्रित हो चुकी है | संक्षिप्त में इस आधुनिक मशीनीकरण के स्थिति में आदिवासियों की आर्थिक, सामाजिक आदि स्थिति की ओर सहाय्यभूत ध्यान देना अनिवार्य है |

• सारांश -

बीसवी सदी के प्रारंभिक वर्षों में जन्म लेनेवाली कहानी अनेक परिवर्तनों के दौर से गुजरी है | आज यह सर्वज्ञात है कि आदिवासियों का मुख्य निवास वनों में था और तेंदूपत्ता, कंदमूल, लकडी, घास, जडी-बूटी, गोंद, कत्था, औषदी, शहद बेचकर आजिविका चलाते थे | साहित्यकारों ने आदिवासियों की संस्कृति और रीति- रिवाजों को नया रुप देने का प्रयास जारी रखा है | आदिवासी जीवन का साक्षात्कार करते हुए उनके खिलाफ अन्याय, अत्याचार, बलात्कार, गरीबी, नैतिक अधःपतन का चित्रण, साथ ही मंत्रियों, सरकारी कर्मचारियों, नेताओं, उद्योगपतियों, पूंजिपतियों, साहूकारों, दलालों, भ्रष्टाचारों का शब्द स्खलन विभिन्न संदर्भों द्वारा करने का प्रयास किया है |

भारतीय संविधान के हक द्वारा आदिवासी जीवनशैली में 'सामाजिक व्यवस्था में परिवर्तन' लाने का मुख्य उद्देश्य रहा है | वैसे बताये तो आदिवासी समुदाय की तथाकथित उच्च समाज व्यवस्था ने अर्थात - ब्राम्हण, उद्योगपति, पूँजिपति, नौकरशाह, व्यापारी वर्ग, साहूकार आदियों ने प्रताडना की है, आज भी कर रहे है | सामाजिक संदर्भों की कहानियाँ लिखनेवालों में - भारत दोसी - वही चप्पले, एस. इलियास - सूर्यास्त, यशोदा टूडू - रावणी माई, फादर पीटर पॉल - राजकुमारों के देश में तो रामधन लाल मीणा जैसे अनेकों ने झूठी न्याय व्यवस्था का मुखौटा फाड डाला है | स्पष्ट है मध्यवर्ग, निम्नवगी्रय आदिवासियों को शिक्षित, आत्मनिर्भर, चेतनामयी, संघर्ष और संघठन का उपदेश देने का उद्देश्य रहा है |

प्राचीन भारतीय समाज - सांस्कृतिक संदर्भ की वर्णभेद व्यवस्था ऋग्वेद में दसवे मंडल के पुरुष सूक्त और मनुस्मृति में किया है | इसकी शिकायत मध्यकालिन संतों ने पहली बार की | तत्पश्चात उन्नीसवी शताब्दी के समाज सुधार आंदोलन ने सामाजिक, सांस्कृतिक, धार्मिक, बुराईयों से मुक्ति का बिगुल बजाया | और रामास्वामी पेरियार ने | हमारी संस्कृति द्रविड होने का दावा किया | डॉ. बाबासाहब आंबेडकर जी ने भी 'अछूत कौन है ? ' का सवाल पूछा | आज आवश्यकता है अपने अस्तित्व को बचाए रखने की |

धर्म व्यक्ति की आस्था है | डॉ. काणेजी के अनुसार - धर्म जीवन का मूलाधार है, इसीसे मानव को प्रकाश और प्रेरणा मिलती है | किंतु आदिवासी धार्मिक व्यवस्था में ईष्टदेव का सर्वाधिक महत्व है | किंतु आज आदिवासियों पर हिंदु धर्म का प्रभाव दिखने लगा है | वास्तवत: आदिवासी कहानियाँ धार्मिक विच्छेद, धर्मगत अलगाव के मूल कारणों की पोल-खोल करने का प्रयास कर आदिवासियों के जीवनशैली को मूर्त स्वरुप दे रहे है |

दलित, स्त्री, आदिवासी या पिछडा वर्ग आज राजनीति में प्रतिनिधित्व चाहता है | किंतु उनकी अनमेलता, अज्ञानता, उनकी कमजोरी का गैर लाभ उठाते है | आदिवासियों को अपने ऊपर होनेवाले दूर्व्यवहारों, छल-कपट, कूट नीति से मुक्ति पाने के लिए अपने आप में सक्षम होना होगा, अपने वोट का मूल्य राजनेताओं को समझाना होगा, ऐसा लगता है |

अर्थप्रणाली समाज का प्राण है | क्योंकि व्यापार, उत्पादक, मजदूर, कृषक, प्रकृत्ति पर निर्भर समाज, कामगार का होना जरुरी है | आदिवासी वनों में बसने पर उन्हें मजबूर किया जिससे उनकी अर्थव्यवस्था डगमगाने लगी है | किंतु आदिवासियों पर आए अस्तित्व (आर्थिक आदि) संकट के मूल क्या होंगे ? उसके उपाय क्या हो सकते है ? के संदर्भ में पूँजीवाद और भौतिकवाद के वर्चस्व को जिम्मेदार ठहराकर अनेक संदर्भों पर सृजन किया है |

• संदर्भ - सूची -

१) आदिवासी भारत - योगेश अटल, यतींद्र सिंह सिसोदिया, पृ - १३७
२) आदिवासी साहित्य यात्रा संपादिका रमणिका गुप्ता, पृ - ४९
३) समकाली न हिंदी कहानी में शिल्प एवं परिदृश्य - अशोक तिवारी, पृ - १३३
४) आदिवासी संघर्ष गाथा - विनोद कुमार, पृ - ८४
५) झारखंड के आदिवासियों के बीच - वीर भारत तलवार, पृ - २१७
६) आदर्श हिंदी शब्दकोश - संपादक पंडित रामचंद्र पाठक, पृ - ३०१
७) कुँवारे देश के आदिवासी - डॉ. महेंद्र भानावत, पृ - १४४
८) मीणा जनजाति का उत्कर्ष - शकुंतला मीणा, पृ - १२८
९) युध्दरत आम आदमी सं. रमणिका गुप्ता, अंक १०३, अप्रैल जून - २०१०, पृ - ६- ७
१०) अरावली उद्घोष, क्रमांक ८९, सितंबर २०१०, सं. वी.पी. वर्मा पथिक, पृ - ५४

११) राजकुमारों के देश में (कहानी संग्रह) - फादर पीटर पॉल एक्का, पृ - १
१२) कथा संगम - सं. गिरधारी राम गौझू, डॉ. कमल कुमार बोस, पृ - १४७
१३) अरावली उद्‌घोष - सं. वी.पी. वर्मा पथिक, जनवरी मार्च - २००२, पृ - २१